ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

कालिदास के नाटकों का काव्य सौष्ठव

डॉ चन्द्र प्रकाश जोशी

व्याख्याता, राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, अजमेर

सार

कालिदास अपनी विषय-वस्तु देश की सांस्कृतिक विरासत से लेते हैं और उसे वे अपने उद्देश्य की प्राप्ति के अनुरूप ढाल देते हैं। उदाहरणार्थ, अभिज्ञान शाकुन्तल की कथा में शकुन्तला चतुर, सांसारिक युवा नारी है और दुष्यन्त स्वार्थी प्रेमी है। इसमें कवि तपोवन की कन्या में प्रेमभावना के प्रथम प्रस्फुटन से लेकर वियोग, कुण्ठा आदि की अवस्थाओं में से होकर उसे उसकी समग्रता तक दिखाना चाहता है। उन्हीं के शब्दों में नाटक में जीवन की विविधता होनी चाहिए और उसमें विभिन्न रुचियों के व्यक्तियों के लिए सौंदर्य और माधुर्य होना चाहिए।

त्रैगुण्योद्भवम् अत्र लोक-चरितम् नानृतम् दृश्यते।
नाट्यम् भिन्न-रुचेर जनस्य बहुधापि एकम् समाराधनम्।।

कालिदास के जीवन के बारे में हमें विशेष जानकारी नहीं है। उनके नाम के बारे में अनेक किवदन्तियां प्रचलित हैं जिनका कोई ऐतिहासिक मूल्य नहीं है। उनकी कृतियों से यह विदित होता है कि वे ऐसे युग में रहे जिसमें वैभव और सुख-सुविधाएं थीं। संगीत तथा नृत्य और चित्र-कला से उन्हें विशेष प्रेम था। तत्कालीन ज्ञान-विज्ञान, विधि और दर्शन-तंत्र तथा संस्कारों का उन्हें विशेष ज्ञान था।

उन्होंने भारत की व्यापक यात्राएं कीं और वे हिमालय से कन्याकुमारी तक देश की भौगोलिक स्थिति से पूर्णतः परिचित प्रतीत होते हैं। हिमालय के अनेक चित्रांकन जैसे विवरण और केसर की क्यारियों के चित्रण (जो कश्मीर में पैदा होती है) ऐसे हैं जैसे उनसे उनका बहुत निकट का परिचय है।

जो बात यह महान कलाकार अपनी लेखिनी के स्पर्श मात्र से कह जाता है, अन्य अपने विशद वर्णन के उपरांत भी नहीं कह पाते। कम शब्दों में अधिक भाव प्रकट कर देने और कथन की स्वाभाविकता के लिए कालिदास प्रसिद्ध हैं। उनकी उक्तियों में ध्वनि और अर्थ का तादात्मय मिलता है। उनके शब्द-चित्र सौन्दर्यमय और सर्वांगीण सम्पूर्ण हैं, जैसे – एक पूर्ण गतिमान राजसी रथ , दौड़ते हुए मृग-शावक (अभिज्ञान-शाकुन्तल, 1.7), उर्वशी का फूट-फूटकर आंसू बहाना , चलायमान कल्पवृक्ष की भांति अन्तरिक्ष में नारद का प्रकट होना । उपमा और रूपकों के प्रयोग में वे सर्वोपरि हैं।[1]

सरसिजमनुविद्धं शैवालेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमिधकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

'कमल यद्यपि शिवाल में लिपटा है, फिर भी सुन्दर है। चन्द्रमा का कलंक, यद्यपि काला है, किन्तु उसकी सुन्दरता बढ़ाता है। ये जो सुकुमार कन्या है, इसने यद्यपि वल्कल-वस्त्र धारण किए हुए हैं तथापि वह और सुन्दर दिखाई दे रही है। क्योंकि सुन्दर रूपों को क्या सुशोभित नहीं कर सकता ?'

कालिदास की रचनाओं में सीधी उपदेशात्मक शैली नहीं है अपितु प्रीतमा पत्नी के विनम्र निवेदन सा मनुहार है। मम्मट कहते हैं : 'कान्तासम्मिततयोपदेशायुजे।' उच्च आदर्शों के कलात्मक प्रस्तुतीकरण से कलाकार हमें उन्हें अपनाने को विवश करता है। हमारे समक्ष जो पात्र आते हैं हम उन्हीं के अनुरूप जीवन में आचरण करने लगते हैं और इससे हमें व्यापक रूप में मानवता को समझने में सहायता मिलती है।

परिचय

एक महान सांस्कृतिक विरासत पर कालिदास के समृद्ध एवं उज्जवल व्यक्तित्व की छाप है और उन्होंने अपनी रचनाओं में मोक्ष, व्यवस्था और प्रेम के आदर्शों को अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने व्यक्ति को संसार के दु:ख-दर्द और संघर्षों से अवगत कराने के लिए, प्रेम-वासना, इच्छा-आकांक्षा, आशा-स्वप्न, सफलता विफलता आदि को अभिव्यक्ति दी है। भारत ने जीवन को अपनी समग्रता में देखा है और उसमें किसी भी विखण्डन का विरोध किया है।

कवि ने उन मानसिक द्वन्द्वों का वर्णन किया है जो आत्मा को विभक्त करते हैं और इस तरह उन्होंने इसे समग्रता में देखने में हमारी सहायता की है।[2]

कालिदास की रचनाओं में हमारे लिए सौंदर्य के क्षण, साहसिक घटनाएं, त्याग के दृश्य और मानव मन की नित-नित बदलती मनः स्थितियों के रूप संरक्षित हैं। उनकी कृतियां मानव प्रारब्ध के वर्णनातीत चित्रण के लिए सदैव पढ़ी जाती रहेंगी क्योंकि कोई महान कवि ही ऐसी प्रस्तुतियां दे सकता है। उनकी अनेक पंक्तियां संस्कृत में सूक्तियां बन गई हैं। उनकी मान्यता है कि हिमालय क्षेत्र में विकसित संस्कृति विश्व की संस्कृतियों की मापदण्ड हो सकती है। यह संस्कृति मूलतः आध्यात्मिक है। हम सभी सामान्यतः समय-चक्र में कैद हैं और इसीलिए हम अपने अस्तित्व की संकीर्ण सीमाओं में घिरे हैं। अतः हमारा उद्देश्य अपने मोहजालों से मुक्त होकर चेतना के उस सत्य को पाने का होना चाहिए जो देश-काल से परे है जो अजन्मा, चरम और कालातीत है। हम इसका चिंतन नहीं कर सकते, इसे वर्गों, आकारों और शब्दों में विभाजित नहीं कर सकते। इस चरम सत्य की अनुभूति का ज्ञान ही मानव का उद्देश्य है। रघुवंश के इन शब्दों को देखिए - 'ब्रह्माभूयम् गतिम् अजागम्।' ज्ञानीपुरुष कालातीत परम सत्य के जीवन को प्राप्त होते हैं।

वह जो चरम सत्य है सभी अज्ञान से परे है और वह आत्मा और पदार्थ के विभाजन से ऊपर है। वह सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान है। वह अपने को तीन रूपों में व्यक्त करता है (त्रिमूर्ति) ब्रह्मा, विष्णु और शिव – कर्त्ता, पालक तथा संहारक। ये देव समाज पद वाले हैं आम जीवन में कालिदास शिवतंत्र के उपासक हैं। तीनों नाटकों – अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र – की आरम्भिक प्रार्थनाओं से प्रकट होता है कि कालिदास शिव-उपासक थे। देखिए रघुवंश के आरम्भिक श्लोक में :

जगतः पितरौ वन्दे पार्वती-परमेश्वरौ।

यद्यपि कालिदास परमात्मा के शिव रूप के उपासक हैं तथापि उनका दृष्टिकोण किसी भी प्रकार संकीर्ण नहीं है। परम्परागत हिन्दू धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण उदार है। दूसरों के विश्वासों को उन्होंने सम्मान की दृष्टि से देखा। कालिदास की सभी धर्मों के प्रति सहानुभूति है और वे दुराग्रह और धर्मान्धता से मुक्त हैं। कोई भी व्यक्ति वह मार्ग चुन सकता है जो अच्छा लगता है क्योंकि अन्ततः ईश्वर के विभिन्न रूप एक ही ईश्वर के विभिन्न रूप हैं जो सभी रूपों में निराकार है।[3]

कालिदास पुनर्जन्म के सिद्धान्त को मानते हैं। यह जीवन में पूर्णता के मार्ग की एक अवस्था है। जैसे हमारा वर्तमान जीवन पूर्व कर्मों का फल है वैसे ही हम इस जन्म में प्रयासों से अपना भविष्य सुधार सकते हैं। विश्व पर सदाचार का शासन है। विजय अन्ततः अच्छाई की होगी। यदि कालिदास की रचनाएं दुखान्त नहीं हैं तो उसका कारण यह कि वे सामंजस्य और शालीनता के अन्तिम सत्य को स्वीकारते हैं। इस मान्यता के अन्तर्गत वे अधिकांश स्त्री-पुरुषों के दुःख-दर्दों के प्रति हमारी सहानुभूति को मोड़ देते हैं।

कालिदास की रचनाओं से इस गलत धारणा का निराकरण हो जाता है कि हिन्दू मस्तिष्क ने ज्ञान-ध्यान पर अधिक ध्यान दिया और सांसारिक दुःख-दर्दों की उन्होंने अवहेलना की। कालिदास के अनुभव का क्षेत्र व्यापक था। उन्होंने जीवन, लोक, चित्रों और फूलों में समान आनन्द लिया। उन्होंने मानव को सृष्टि (ब्रह्माण्ड) और धर्म की शक्तियों से अलग करके नहीं देखा। उन्हें मानव के सभी प्रकार के दुःखों, आकांक्षाओं, क्षणिक खुशियों और अन्तहीन आशाओं का ज्ञान था।

वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष – मानव जीवन के चार पुरुषार्थों में सामंजस्य के पोषक थे। अर्थ पर, जिसमें राजनीति और कला भी सम्मिलित है धर्म का शासन रहना चाहिए। साध्य और साधन में परस्पर सह-संबंध है। जीवन वैध (मान्य) संबंधों से ही जीने योग्य रहता है। इन संबंधों को स्वच्छ और उज्जवल बनाना ही कवि का उद्देश्य था।

इतिहास प्राकृतिक तथ्य न होकर नैतिक सत्य है। यह काल-क्रम का लेखा-जोखा मात्र नहीं है। इसका सार अध्यात्म में निहित है जो आगे की पीढ़ियों को ज्ञान प्रदान करता है। इतिहासकारों को अज्ञान को भेद कर उस आन्तरिक नैतिक गतिशीलता को आत्मसात करना चाहिए। इतिहास मानव की नैतिक इच्छा का फल है जिसकी अभिव्यक्तियां स्वतंत्रता और सृजन हैं।[4]

रधुवंश के राजा जन्म से ही निष्कलंक थे। धरती से लेकर समुद्र तक (आसमुद्रक्षितिसानाम्) इनका व्यापक क्षेत्र में शासन था। इन्होंने धन का संग्रह दान के लिए किया, सत्य के लिए चुने हुए शब्द कहे, विजय की आकांक्षा यश के लिए की और गृहस्थ जीवन पुत्रेष्णा के लिए रखा। बचपन में शिक्षा, युवावस्था में जीवन के सुखभोग, वृद्धावस्था में आध्यात्मिक जीवन और अन्त में योग या ध्यान द्वारा शरीर का त्याग किया।

राजाओं ने राजस्व की वसूली जन-कल्याण के लिए की, 'प्रजानाम् एवं भूत्यार्थम्' जैसे सूर्य जल लेता है और उसे सहस्रगुणा करके लौटा देता है। राजाओं का लक्ष्य धर्म और न्याय होना चाहिए। राजा ही प्रजा का सच्चा पिता है, वह उन्हें शिक्षा देता है, उनकी रक्षा करता है और उन्हें जीविका प्रदान करता है जबकि उनके माता-पिता केवल उनके भौतिक जन्म के हेतु हैं। राजा अज के राज्य में प्रत्येक व्यक्ति यही मानता था कि राजा उनका व्यक्तिगत मित्र है।

शाकुन्तलं में तपस्वी राजा से कहता है : 'आपके शस्त्र त्रस्त और पीड़ितों की रक्षा के लिए हैं न कि निर्दोषों पर प्रहार के लिए।' 'आर्त त्राणाय वाह शस्त्रम् न प्रहारतुम् अनगसि।' दुष्यन्त एवं शकुन्तला का पुत्र भरत, जिसके नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा है, सर्वदमन भी कहलाता है – यह केवल इसलिए नहीं कि उसने केवल भयानक वन्य पशुओं पर विजयी पायी अपितु उसमें आत्मसंयम भी था। राजा के लिए आत्मसंयम भी अनिवार्य है।

रघुवंश में अग्निवर्ण दुराचारी हो जाता है। उसके अन्तःपुर में इतनी अधिक नारियां हैं कि वह उनका सही नाम तक नहीं जान पाता। उसे क्षय हो जाता है और उस अवस्था में भी भोग का आनन्द नहीं छोड़ पाता और उसकी मृत्यु हो जाती है। शालीन मानव-जीवन

के लिए संयम अनिवार्य है। कालिदास कहते है : 'हे कल्याणी, खान से निकलने के उपरांत भी कोई भी रत्न स्वर्ण में नहीं जड़ा जाता, जब तक उसे तराशा नहीं जाता।'

यद्यपि कालिदास की कृतियों में तप को भव्यता प्रदान की गई है और साधु और तपस्वियों को पूजनीय रूप में प्रस्तुत किया गया है, तथापि कहीं भी भिक्षापात्र की सराहना नहीं की गई।[5]

धर्म के नियम जड़ एवं अपरिवर्तनीय नहीं हैं। परम्परा को अपनी अन्तर्दृष्टि और ज्ञान से सही अर्थ दिया जाना चाहिए। परम्परा और व्यक्तिगत अनुभव एक-दूसरे के पूरक हैं। जहां हमें एक ओर अतीत विरासत में मिला है वहीं हम दूसरी ओर भविष्य के न्यासधारी (ट्रस्टी) हैं। अपने अन्तिम विश्लेषण में प्रत्येक को सही आचरण के लिए अपने अन्तःकरण में झांकना चाहिए। भगवतगीता के आरम्भिक अध्याय में जब अर्जुन क्षत्रिय होने के नाते समाज द्वारा आरोपित युद्ध करने के अपने दायित्व से मना करते हैं और जब सुकरात कहते हैं, 'एथेंसवासियों! मैं ईश्वर की आज्ञा का पालन करूंगा, तुम्हारी आज्ञा का नहीं।' तो वे ऐसा अपनी अन्तर्आत्मा के निर्देश पर कहते हैं न कि किसी बंधे-बंधाए नियमों के अनुपालन के कारण। आरम्भिक वैदिक साहित्य में जड़-चेतन की एकरूपता का निरूपण है और अनेक वैदिक देवी-देवता प्रकृति के प्रमुख पक्षों का प्रतिनिधित्व करते हैं। आत्मज्ञान की खोज में प्रकृति की शरण में जाने, हिमश्रृंगों पर जाने या तपोवन में जाने का शिकार बहुत प्राचीन काल से हमारे यहां विद्यमान रहा है। मानव के रूप में हमारी जड़े प्रकृति में हैं और हम नाना रुपों में इसे जीवन में देखते हैं। रात और दिन, ऋतु-परिवर्तन – ये सब मानव-मन के परिवर्तन, विविधता और चंचलता के प्रतीक हैं। कालिदास के लिए प्रकृति यन्त्रवत और निर्जीव नहीं है। इसमें एक संगीत है। कालिदास के पात्र पेड़-पौधों, पर्वतों तथा नदियों के प्रति संवेदनशील हैं और पशुओं के प्रति उनमें भ्रात भावना है। हमें उनकी कृतियों में खिले हुए फूल, उड़ते पक्षी और उछलते-कूदते पशुओं के वर्मन दिखाई देते हैं। रघुवंश में हमें गाय के प्रेम का अनुपम वर्णन मिलता है। ऋतुसंहार में षट ऋतुओं का हृदयस्पर्शी विवरण है। ये विवरण केवल कालिदास के प्राकृतिक-सौन्दर्य के प्रति उनकी दृष्टि को नहीं अपितु मानव-मन के विविध रूपों और आकांक्षाओं की समझ को भी प्रकट करते हैं। कालिदास के लिए नदियों, पर्वतों, वन-वृक्षों में चेतन व्यक्तित्व है जैसा कि पशुओं और देवों में है।

शाकुन्तला प्रकृति की कन्या है। जब उसे उसकी अमानुषी मां मेनका ने त्याग दिया तो आकाशगामी पक्षियों ने उसे उठाया और तब तक उसका पालन-पोषण किया जब तक कि कण्ठ ऋषि आश्रम में उसे नहीं ले गए। शकुन्तला ने पौधों को सींचा, उन्हें अपने साथ-साथ बढ़ते देखा और जब उनके ऊपर फल-फूल आए तो ऐसे अवसरों को उसने उत्सवों की भांति मनाया। शाकुन्तला के विवाह के अवसर पर वृक्षों ने उपहार दिए, वनदेवियों ने पुष्प-वर्षा की, कोयलों ने प्रसन्नता के गीत गाए। शकुंतला की विदाई के समय आश्रम दुःख से भर उठा। मृगों के मुख से चारा छूट कर गिर पड़ा, मयूरों का नृत्य रुक गया और लताओं ने अपने पत्रों के रूप में अश्रु गिराए।[6]

सीता के परित्याग के समय मयूरों ने अपना नृत्य एकदम बन्द कर दिया, वृक्षों ने अपने पुष्प झाड़ दिए और मृगियों ने आधे चबाए हुए दूर्वादलों को मुंह से गिरा दिया।

कालिदास कोई विषय चुनते हैं और आँख में उसका एक सजीव चित्र उतार लेते हैं। मानस-चित्रों की रचना में वे बेजोड़ हैं। कालिदास का प्रकृति का ज्ञान यथार्थ ही नहीं था अपितु सहानुभूति भी था। उनकी दृष्टि कल्पना से संयुक्त है। कोई भी व्यक्ति तब तक पूर्णतः महिमामण्डित नहीं हो सकता जब तक कि वह मानव जीवन से इतर जीवन की महिमा और मूल्यों को नहीं जानता। हमें जीवन के समग्र रूपों के प्रति संवेदना विकसित करनी चाहिए। सृष्टि केवल मनुष्य के लिए नहीं रची गई है।

पुरुष और नारी के प्रेम ने कालिदास को आकर्षित किया और प्रेम के विविध रूपों के चित्रण में उन्होंने अपनी समृद्ध कल्पना का खुलकर उपयोग किया है। इसमें उनकी कोई सीमाएं नहीं हैं। उनकी नारियों में पुरुषों की अपेक्षा अधिक आकर्षण है क्योंकि उनमें कालातीत और सार्वभौम गुण हैं जबकि पुरुष पात्र संवेदना शून्य और अस्थिर बुद्धि हैं। उनकी संवेदना सतही है जबकि नारी का दुःख-दर्द अन्तरतम का है।

पुरुष में स्पर्धा की भावना और स्वाभिमान उसके कार्यालय, कारखाने या रणक्षेत्र में उपयोगी हो सकते हैं पर उनकी तुलना नारी के सुसंस्कार, सौन्दर्य और शालीनता के गुणों से नहीं हो सकती। अपने व्यवस्था और सामंजस्य के प्रेम के कारण नारी परम्परा (संस्कृति) को जीवित रखती है।

जब कालिदास नारी के सौन्दर्य का वर्णन करते हैं तो वे शास्त्रीय शैली को अपनाते हैं और ऐसा करते समय वे अपने विवरणों के वासनाजन्य होने या अतिविस्तृत हो जाने का खतरा मोल लेते हैं। मेघदूत में 'मेघ' को 'यक्ष' अपनी पत्नी का विवरण (हुलिया) इस प्रकार देता है :

'नारियों में वह ऐसी है मानो विधाता ने उसका रचना सर्वप्रथम की है, पतली और गोरी है, दांत पतले और सुन्दर हैं। नीचे के ओष्ठ पके बिम्ब फल (कुंदरू) की भांति लाल है। कमर पतली है। आँखें उसकी चकित हिरणी जैसी हैं। नाभि गहरी है तथा चाल उसकी नितम्बभार से मन्द और स्तनभार से आगे की ओर झुकी हुई है।'

कालिदास द्वारा प्रस्तुत की गई नारियों में हमें अनेक रोचक प्रकार दिखाई देते हैं। उनमें से अनेक को समाज के परम्परागत बहानों और सफाई की आवश्यकता नहीं है। उनके द्वन्द्व और तनावों को सामंजस्य की आवश्यकता थी। पुरुष संदेहमुक्त अनुभव करते थे

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

और वे पूर्ण सुरक्षित थे। बहुविवाह उनके लिए आम बात थी, परन्तु कालिदास की नारियां कल्पनाशील और चतुर हैं अतः वे संदेह और अनिश्चय के घेरे में आ जाती हैं। वे सामान्यतः अस्थिर नहीं हैं परन्तु वे विश्वसनीय, निष्ठावान तथा प्रेममय हैं।[7]

प्रेम के लिए झेली गई कठिनाइयां और यातनाएं प्रेम को और गहन बनाती हैं। मेघदूत में अजविलाप और रतिविलाप में वियोग की करुणामय मार्मिक अभिव्यक्ति है। प्रेम का संयोग रूप विक्रमोर्वशीय में है।

मालविकाग्निमित्र में रानी को धरिणी कहा गया है क्योंकि वह सब कुछ सहती है। उसमें गरिमा और सहिष्णुता है। इरावती कामुक, अविवेकी, शंकालु, अतृप्त और मनमानी करने वाली है। जब राजा ने उसे छोड़कर मालविका को अपनाया तो वह कठोर शब्दों में शिकायत करती है और कटु शब्दों में राजा को फटकारती है।

मालविका के प्रति अग्निमित्र का प्रेम इन्द्रिपरक है। राजा दासी की सुन्दरता और लावण्य पर मोहित है। विक्रमोर्वशीय में पात्रों में दैवी और मानवीय गुणों का मिश्रण है। उर्वशी का चरित्र सामान्य जीवन से हटकर है। उसमें इतनी शक्ति है कि अदृश्य रूप से वह अपने प्रेमी को देख सकती है तथा उसकी बातें सुन सकती है। उसमें मातृप्रेम नहीं है क्योंकि वह अपने पति को खोने के स्थान पर अपने बच्चे का परित्याग कर देती है। उसका प्रेम स्वार्थजन्य है।

पुरुरवा भावविह्वल होकर प्रेम के गीत गाता है जिसका भावार्थ यह है कि विश्व की सत्ता उतनी आनन्ददायक नहीं जितना प्रेम आनन्ददायक है। विफल प्रेमी के लिए संसार दुःख और निराशा से भरा है और सफल प्रेमी के लिए वह सुख और आनन्द से भरा है। इस नाटक में हम प्रेम को फलीभूत होते देखते हैं। इसमें भूमि और आकाश एक होते हैं। भौतिक आकर्षण पर आधारित वासना नैतिक सौन्दर्य और आध्यात्मिक ज्ञान में परिवर्तित होती है।

विचार – विमर्श

ऋतुसंहार :-
यह कालिदास की सर्वप्रथम कृति हैं. यह गीतिकाव्य है जिसमें षडऋतुओं का छः सर्गों में वर्णन हैं. ऋतुओं का वर्णन प्रायः उद्दीपन रूप में हुआ हैं।

मेघदूत :-
ऋतु संहार की अपेक्षा यह एक बड़ी रचना हैं. यह एक गीतिप्रधान खंड काव्य हैं. इसमें कुबेर के शाप से रामगिरी में निर्वासित एक यक्ष वर्षा ऋतु आने पर मेघ के द्वारा अपनी अलका प्रवासिनी प्रिया को संदेश भेजता हैं. इसके दो खंड हैं पूर्व मेघ तथा उत्तर मेघ। भाव पक्ष व कला पक्ष दोनों द्रष्टियों से यह एक उच्च श्रेणी का काव्य हैं. इसमें वियोग श्रृंगार रस है, फिर भी नैतिकता की शिष्टता काव्य में सर्वत्र है. पूर्व मेघ में प्रकृति के मनोरम दृश्यों का आकर्षक चित्रण है तथा उत्तर मेघ सौन्दर्य और प्रेम के चित्रण से भरा हुआ हैं. भावाभिव्यंजना तथा प्राकृतिक सौन्दर्य की द्रष्टि से यह अत्यंत ही सुंदर काव्य हैं.[8]

कुमारसंभव :-
यह एक महाकाव्य हैं. इस महाकाव्य में पार्वती विवाह, कुमार जन्म, तारकासुर वध की कथा प्रमुख हैं, शेष प्रासंगिक कथायें हैं. इस महाकाव्य में 17 सर्ग हैं. परन्तु कुछ विद्वान् इनमें से प्रथम आठ को ही प्रमाणिक मानते हैं, शेष सर्गों को विद्वानों द्वारा बाद में जोड़ा हुआ माना गया हैं.
उदात्त, सरस एवं कोमल भावाभिव्यक्ति, स्वाभाविक एवं मंजुल कल्पनाएँ, कोमलकांत पदावली, अलंकारों का सहज स्वाभाविक प्रयोग, प्रकृति का सुरम्य चित्रण, तप, समाधि, संयोग, वियोग आदि का वर्णन इस काव्य की प्रमुख विशेषताएं हैं. कुमारसंभव कालिदास की उत्कृष्ट कोटि की रचना हैं.

रघुवंश :
रघुवंश महाकाव्य कालिदास एक उत्कृष्ट कृति है। सूर्यवंशी के 30 राजाओं का इस महाकाव्य के 19 सर्गों में वर्णन किया है। रघुवंश महाकाव्य में, एक वंश के कई नायकों को एक नायक के चरित्र के आधार के रूप में चित्रित किया गया है।
रघुवंश के 19 सर्गों में सूर्यवंशी राजाओं दिलीप से राम और राम के वंशजों का चरित्र चित्रण है। इस महाकाव्य के पहले 9 सर्गों में, राम के चार पूर्वजों दिलीप, रघु, अज और दशरथ का वर्णन मिलता है और दसवें सर्ग से 15 वें सर्ग तक के 6 सर्गों में राम के जीवन वृत्त का वर्णन है।
16 वें सर्ग से 18 वें सर्ग तक के चार सर्गों में राम के वंशजों का वर्णन मिलता हैं। 19 वें सर्ग में कामुक अग्निवर्ण का वर्णन मिलता हैं। इस काव्य में सभी रसों का सुंदर वर्णन है। रघु और राम के युद्ध कथाओं में, जहाँ वीर रस का चित्रण किया गया है, वहां आर्त विलाप में करुण रस की अजस्र धारा प्रवाहित होती हैं।
रघु वंश में कवि द्वारा एक से एक सुंदर आदर्श प्रस्तुत किए गए हैं। रघुवंश के पास रघु के बेटे अज की इंदुमती से शादी, इंदुमती की मृत्यु और अज के करुण विलाप, राम और सीता के पुष्पक विमान द्वारा प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन आदि का एक आकर्षक चित्रण है।[7]

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

मालविकाग्निमित्र :
यह कालिदास द्वारा रचित एक नाटक है। इसमें पाँच अंक हैं जो पुष्यमित्र के पुत्र, शुंगवंश के संस्थापक और मालविका के प्रेम की उन्नति का वर्णन करते हैं। यह कवि का पहला नाटक है, इसलिए इसमें काव्यात्मक कौशल का सबसे बड़ा रूप उपलब्ध नहीं है, फिर भी यह नाट्य कला के दृष्टिकोण से एक बहुत ही सुंदर रचना है।

विक्रमोर्यवशियम् :
कालिदास की नाट्यकला सम्बन्धी विकास की द्रष्टि से इस नाटक का दूसरा स्थान है। यह पांच अंकों का नाटक पुरुरवा उर्वशी की प्रसिद्ध पौराणिक कथा को बताता है। इसमें कवि ने पुरुरवा और उर्वशी के मूल प्रेम को बड़ी मार्मिकता से चित्रित किया है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् :
यह संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक हैं। भारतीय परम्परा इस नाटक को संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नाटक मानती हैं काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला इसकी कथा महाभारत से ली गई हैं। इसमें सात अंक हैं।

यह हस्तिनापुर और शकुंतला के राजा दुष्यंत के प्रेम, वियोग और पुनर्मिलन की कहानी बयान करता है। इसमें श्रृंगार और करुण रस का सुंदर निष्पादन है। कालिदास का यह नाटक नाट्यशास्त्र का सबसे अच्छा उदाहरण है। नाटक का चैथा अंक सबसे अच्छा है। कवि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस नाटक का प्रत्येक पात्र चरित्र की दृष्टि से आदर और सम्मान के योग्य है, इसमें कविता की कोमलता, भावनाओं की गहराई और उदात्तता आदि का सुंदर समावेश है।

कालिदास का काव्य सौंदर्य :
कालिदास अपनी विषय-वस्तु देश की सांस्कृतिक विरासत से लेते हैं और उसे वे अपने उद्देश्य की प्राप्ति के अनुरूप ढाल देते हैं। उदाहरणार्थ, अभिज्ञान शाकुन्तल की कथा में शकुन्तला चतुर, सांसारिक युवा नारी है और दुष्यन्त स्वार्थी प्रेमी है। इसमें कवि तपोवन की कन्या में प्रेमभावना के प्रथम प्रस्फुटन से लेकर वियोग, कुण्ठा आदि की अवस्थाओं में से होकर उसे उसकी समग्रता तक दिखाना चाहता है। उन्हीं के शब्दों में नाटक में जीवन की विविधता होनी चाहिए और उसमें विभिन्न रुचियों के व्यक्तियों के लिए सौंदर्य और माधुर्य होना चाहिए।[6]

त्रैगुण्योद्भवम् अत्र लोक-चरितम् नानृतम् दृश्यते।
नाट्यम् भिन्न-रुचेर जनस्य बहुधापि एकम् समाराधनम्।।

कालिदास के जीवन के बारे में हमें विशेष जानकारी नहीं है। उनके नाम के बारे में अनेक किवदन्तियां प्रचलित हैं जिनका कोई ऐतिहासिक मूल्य नहीं है। उनकी कृतियों से यह विदित होता है कि वे ऐसे युग में रहे जिसमें वैभव और सुख-सुविधाएं थीं। संगीत तथा नृत्य और चित्र-कला से उन्हें विशेष प्रेम था। तत्कालीन ज्ञान-विज्ञान, विधि और दर्शन-तंत्र तथा संस्कारों का उन्हें विशेष ज्ञान था।

उन्होंने भारत की व्यापक यात्राएं कीं और वे हिमालय से कन्याकुमारी तक देश की भौगोलिक स्थिति से पूर्णतः परिचित प्रतीत होते हैं। हिमालय के अनेक चित्रांकन जैसे विवरण और केसर की क्यारियों के चित्रण (जो कश्मीर में पैदा होती है) ऐसे हैं जैसे उनसे उनका बहुत निकट का परिचय है।

जो बात यह महान कलाकार अपनी लेखिनी के स्पर्श मात्र से कह जाता है, अन्य अपने विशद वर्णन के उपरांत भी नहीं कह पाते। कम शब्दों में अधिक भाव प्रकट कर देने और कथन की स्वाभाविकता के लिए कालिदास प्रसिद्ध हैं। उनकी उक्तियों में ध्वनि और अर्थ का तादात्मय मिलता है। उनके शब्द-चित्र सौन्दर्यमय और सर्वांगीण सम्पूर्ण हैं, जैसे ट एक पूर्ण गतिमान राजसी रथ (विक्रमोर्वशीय, 1.4), दौड़ते हुए मृग-शावक (अभिज्ञान-शाकुन्तल, 1.7), उर्वशी का फूट-फूटकर आंसू बहाना (विक्रमोर्वशीय, छन्द 15), चलायमान कल्पवृक्ष की भांति अन्तरिक्ष में नारद का प्रकट होना (विक्रमोर्वशीय, छन्द 19)। उपमा और रूपकों के प्रयोग में वे सर्वोपरि हैं।[5]

सरसिजमनुविद्धं शैवालेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमिधकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

'कमल यद्यपि शिवाल में लिपटा है, फिर भी सुन्दर है। चन्द्रमा का कलंक, यद्यपि काला है, किन्तु उसकी सुन्दरता बढ़ाता है। ये जो सुकुमार कन्या है, इसने यद्यपि वल्कल-वस्त्र धारण किए हुए हैं तथापि वह और सुन्दर दिखाई दे रही है। क्योंकि सुन्दर रूपों को क्या सुशोभित नहीं कर सकता ?'

कालिदास की रचनाओं में सीधी उपदेशात्मक शैली नहीं है अपितु प्रीतमा पत्नी के विनम्र निवेदन सा मनुहार है। मम्मट कहते हैं: 'कान्तासम्मिततयोपदेशायुजे।' उच्च आदर्शों के कलात्मक प्रस्तुतीकरण से कलाकार हमें उन्हें अपनाने को विवश करता है। हमारे समक्ष जो पात्र आते हैं हम उन्हीं के अनुरूप जीवन में आचरण करने लगते हैं और इससे हमें व्यापक रूप में मानवता को समझने में सहायता मिलती है।

परिणाम

सांस्कृतिक एवं सामाजिक तत्त्व :

कालिदास के समृद्ध और उज्ज्वल व्यक्तित्व को एक महान सांस्कृतिक विरासत द्वारा चिह्नित किया गया है और उन्होंने अपने कार्यों में मुक्ति, व्यवस्था और प्रेम के आदर्शों को अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने व्यक्ति को दुनिया के दुखों और संघर्षों से अवगत कराने के लिए प्यार, वासना, इच्छा-आकांक्षा, आशा-सपना, सफलता, असफलता आदि की अभिव्यक्ति दी है। भारत ने अपनी समग्रता में जीवन को देखा है और इसमें किसी भी विखंडन का विरोध किया है।

कवि ने आत्मा को विभाजित करने वाले मानसिक द्वंद्व का वर्णन किया है और इस प्रकार हमें इसे समग्रता में देखने में मदद मिली है।[4]

कालिदास की रचनाएँ हमारे लिए सुंदरता, साहसिक घटनाओं, त्याग के दृश्यों और मानव मन की बदलती स्थितियों के लिए संरक्षित करती हैं। उनके कार्यों को हमेशा मानव भाग्य के एक अवर्णनीय चित्रण के लिए पढ़ा जाएगा, क्योंकि केवल एक महान कवि ही ऐसी प्रस्तुतियां दे सकता है। उनकी अनेक पंक्तियां संस्कृत में सूक्तियां बन गई हैं। उनका मानना है कि हिमालयी क्षेत्र में विकसित संस्कृति दुनिया की संस्कृतियों का मानक हो सकती है। यह संस्कृति मूलतः आध्यात्मिक है। हम सभी समय चक्र में कैद हैं और इसीलिए हम अपने अस्तित्व की संकीर्ण सीमा में ही सीमित हैं। इसलिए, हमारा उद्देश्य होना चाहिए कि हम अपने प्रलोभनों से छुटकारा पाएं और चेतना की उस सच्चाई को प्राप्त करें जो देश-युग से परे है जो अजन्मा, चरम और कालातीत है। हम इसका चिंतन नहीं कर सकते, इसे वर्गों, आकारों और शब्दों में विभाजित कर सकते हैं। इस चरम सत्य का ज्ञान मानव का उद्देश्य है। रघुवंश के इन शब्दों को देखिए - 'ब्रह्माभूयम् गतिम् अजागम्।' ज्ञानीपुरुष कालातीत परम सत्य के जीवन को प्राप्त होते हैं।

वह जो चरम सत्य है सभी अज्ञान से परे है और वह आत्मा और पदार्थ के विभाजन से ऊपर है। वह सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान है। वह अपने को तीन रूपों में व्यक्त करता है (त्रिमूर्ति) ब्रह्मा, विष्णु और शिव द्द कर्त्ता, पालक तथा संहारक। ये देव समाज पद वाले हैं आम जीवन में कालिदास शिवतंत्र के उपासक हैं। तीनों नाटकों द्द अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र द्द की आरम्भिक प्रार्थनाओं से प्रकट होता है कि कालिदास शिव-उपासक थे। देखिए रघुवंश के आरम्भिक श्लोक में :[3]

जगतः पितरौ वन्दे पार्वती-परमेश्वरौ।

यद्यपि कालिदास परमात्मा के शिव रूप के उपासक हैं, उनका दृष्टिकोण संकीर्ण नहीं है। परम्परागत हिन्दू धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण उदार है। वह दूसरों की मान्यताओं को सम्मान के साथ देखता था। कालिदास में सभी धर्मों के प्रति सहानुभूति है और वह शातिरता और कट्टरता से मुक्त है। कोई भी व्यक्ति उस मार्ग को चुन सकता है जो अच्छा लगता है क्योंकि अंततः भगवान के विभिन्न रूप एक ही भगवान के विभिन्न रूप हैं जो सभी रूपों में निराकार हैं।

कालिदास पुनर्जन्म के सिद्धांत का पालन करते हैं। यह जीवन में पूर्णता के मार्ग का एक चरण है। जिस तरह हमारा वर्तमान जीवन पिछले कर्मों का फल है, उसी तरह हम इस जन्म में प्रयासों से अपने भविष्य को बेहतर बना सकते हैं। विश्व पर सदाचार का शासन है। विजय अन्ततः अच्छाई की होगी। यदि कालिदास की रचनाएँ दर्दनाक नहीं हैं तो उसका कारण यह है कि वह सद्भाव और शालीनता के अंतिम सत्य को स्वीकार करते हैं। इस विश्वास के तहत, वे ज्यादातर पुरुषों और महिलाओं के दुखों के लिए हमारी सहानुभूति को मोड़ देते हैं।

कालिदास के लेखन ने इस भ्रांति को दूर किया कि हिंदू मन ने ज्ञान और ध्यान पर अधिक ध्यान दिया और सांसारिक दुखों की उपेक्षा की। कालिदास के अनुभव का क्षेत्र विस्तृत था। उन्होंने समान रूप से जीवन, लोक, चित्रों और फूलों का आनंद लिया। उसने मनुष्य को सृष्टि (ब्रह्मांड) और धर्म की शक्तियों से अलग नहीं देखा। उन्हें सभी प्रकार के मानवीय दुखों, आकांक्षाओं, क्षणिक खुशी और अंतहीन आशाओं का ज्ञान था।[2]

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 2, Issue 4, April 2013

निष्कर्ष

कालिदास संस्कृत साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनकी प्रतिभा सर्वांगीण है। महाकाव्य, नाटक और गीत के सभी क्षेत्रों में उनकी रचनाएँ अद्वितीय हैं। तत्कालीन समाज की वास्तविक रूप और सांस्कृतिक चेतना की झांकी उनके कार्यों में पाई जाती है। कालीदास को दुनिया के महान काव्य साहित्कारों में गिना जाता है।[8]

संदर्भ

1. रामजी उपाध्याय, संस्कृत साहित्य का गंभीर इतिहास 20 जुलाई 2001)।
2. " निर्गतसु न वै कस्य कालिदासस्य सूक्तिसु। प्रीतिर्मधुर संद्रासु ...।" - बाणभट्ट, हर्षचरितम।
3. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', संस्कृत साहित्य का इतिहास, चैखम्भा भारती अकादमी, पृ। 2002
4. अच्युतानंद घिल्डियाल और गोदावरी घिल्डियाल - कालीदासा और उनका मानव साहित्य 2, 2004
5. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', संस्कृत साहित्य का इतिहास, चैखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ 19, 2001
6. एबी कीथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास, चैखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ 125, 2000
7. " चित्तं व्युपनोति यः क्षिप्रं शुष्काण्डनमिवनलः स प्रसादाः स्मस्तेषु रेसु रंचासु वा।" 2003
8. " उपमा कालिदासस्य ... " 2005